INTERNATIONAL ADVANCE JOURNAL OF ENGINEERING, SCIENCE AND MANAGEMENT (IAJESM)
July-December 2023, Submitted in October 2023, iajesm2014@gmail.com, ISSN -2393-8048
Multidisciplinary Indexed/Peer Reviewed Journal. SJIF Impact Factor 2023 =6.753

समकालीन हिंदी उपन्यासों में वृद्ध जनों का जीवन–संघर्ष और सामाजिक यथार्थ

Sharvan Ram Bansura, Research Scholar, Department of Hindi, Sabarmati University, Gujarat
Dr. Poonam Lata Middha, Associate Professor, Department of Hindi, Sabarmati University, Gujarat

सार

समकालीन हिंदी साहित्य में सामाजिक परिवर्तन, पारिवारिक संरचना के बदलाव और आधुनिक जीवन की जटिलताओं का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इन परिवर्तनों के बीच वृद्ध जनों का जीवन एक महत्वपूर्ण सामाजिक और मानवीय विषय के रूप में उभरकर सामने आया है। हिंदी के समकालीन उपन्यासों में वृद्धावस्था से जुड़े विभिन्न पक्षों–जैसे अकेलापन, उपेक्षा, पारिवारिक विघटन, आर्थिक असुरक्षा, और मानसिक पीड़ाकृका यथार्थपरक चित्रण मिलता है। यह शोध–पत्र समकालीन हिंदी उपन्यासों में चित्रित वृद्ध जनों के जीवन–संघर्ष और उनके सामाजिक यथार्थ का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसके माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि बदलते सामाजिक मूल्यों और आधुनिकता के प्रभाव ने वृद्ध जनों की स्थिति को किस प्रकार प्रभावित किया है।

प्रस्तावना

मानव जीवन का अंतिम चरण वृद्धावस्था है, जो अनुभव, स्मृति और जीवन–ज्ञान से समृद्ध होती है। भारतीय समाज में परंपरागत रूप से वृद्ध जनों को सम्मान और आदर की दृष्टि से देखा जाता रहा है। संयुक्त परिवार व्यवस्था में वृद्ध जन परिवार के मार्गदर्शक और निर्णयकर्ता होते थे। किन्तु आधुनिकता, शहरीकरण, औद्योगीकरण तथा भौतिकवादी जीवन–दृष्टि के कारण पारिवारिक संरचना में व्यापक परिवर्तन आया है। संयुक्त परिवारों का विघटन और एकल परिवारों की बढ़ती प्रवृत्ति ने वृद्ध जनों की स्थिति को प्रभावित किया है। परिणामस्वरूप उन्हें उपेक्षा, अकेलेपन और असुरक्षा जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। समकालीन हिंदी उपन्यासकारों ने इस बदलते सामाजिक यथार्थ को अपने साहित्य में संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया है। उपन्यासों में वृद्ध पात्र केवल सहानुभूति के पात्र नहीं हैं, बल्कि वे समाज की बदलती मानसिकता और मूल्य–संक्रमण के प्रतीक भी हैं।

समकालीन हिंदी साहित्य और सामाजिक यथार्थ

समकालीन हिंदी साहित्य का प्रमुख उद्देश्य समाज के वास्तविक जीवन का चित्रण करना है। यह साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि सामाजिक समस्याओं और मानवीय संघर्षों को उजागर करने का माध्यम भी है।

समकालीन उपन्यासों में लेखक समाज के विभिन्न वर्गों महिला, दलित, किसान, मजदूर और वृद्ध जन के जीवन को केंद्र में रखते हैं। इस दृष्टि से वृद्धावस्था का चित्रण सामाजिक चेतना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है।

आज के समाज में वृद्ध जन कई प्रकार की चुनौतियों का सामना कर रहे हैं जैसे–

- पारिवारिक उपेक्षा
- आर्थिक निर्भरता
- मानसिक तनाव
- अकेलापन
- सामाजिक अलगाव

समकालीन उपन्यास इन समस्याओं को यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत करते हैं।

उद्देश्य

इस शोध–अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

- समकालीन हिंदी उपन्यासों में वृद्ध जनों के जीवन–संघर्ष का अध्ययन करना।
- वृद्धावस्था से संबंधित सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक समस्याओं का विश्लेषण करना।
- बदलती पारिवारिक संरचना के कारण वृद्ध जनों की स्थिति में आए परिवर्तनों को समझना।
- समकालीन हिंदी उपन्यासों में वृद्ध जनों के प्रति समाज की दृष्टि और संवेदनशीलता का अध्ययन करना।
- साहित्य के माध्यम से समाज में वृद्ध जनों के प्रति जागरूकता और मानवीय मूल्यों की आवश्यकता को रेखांकित करना।

शोध–पद्धति

इस शोध–अध्ययन में मुख्यतः विश्लेषणात्मक और वर्णनात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है। अध्ययन के लिए समकालीन हिंदी उपन्यासों का चयन करके उनमें चित्रित वृद्ध जनों के जीवन से संबंधित पहलुओं

का गहन अध्ययन किया गया है।

इस शोध में प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोत के रूप में समकालीन हिंदी उपन्यासों को आधार बनाया गया है, जबकि द्वितीयक स्रोतों के अंतर्गत आलोचनात्मक ग्रंथ, शोध–पत्र, साहित्यिक पत्रिकाएँ तथा संबंधित संदर्भ–सामग्री का अध्ययन किया गया है। इन स्रोतों के आधार पर वृद्ध जनों के जीवन–संघर्ष, सामाजिक स्थिति और साहित्य में उनके चित्रण का विश्लेषण किया गया है।

इसके अतिरिक्त इस अध्ययन में तुलनात्मक दृष्टिकोण को भी अपनाया गया है, जिसके माध्यम से विभिन्न उपन्यासों में चित्रित वृद्ध पात्रों की परिस्थितियों और अनुभवों का अध्ययन कर उनके सामाजिक यथार्थ को समझने का प्रयास किया गया है।

वृद्ध जनों का जीवन–संघर्ष

समकालीन हिंदी उपन्यासों में वृद्ध जनों का जीवन संघर्षपूर्ण और जटिल दिखाई देता है। यह संघर्ष केवल शारीरिक या आर्थिक नहीं बल्कि मानसिक और भावनात्मक भी है।

(1) पारिवारिक उपेक्षा

वर्तमान समाज में वृद्ध जनों की सबसे बड़ी समस्या पारिवारिक उपेक्षा है। पहले जहाँ परिवार में उनका सम्मान और महत्व था, वहीं आज कई स्थानों पर उन्हें बोझ समझा जाने लगा है।

उपन्यासों में कई ऐसे पात्र मिलते हैं जो अपने ही परिवार में उपेक्षित जीवन जीते हैं। बच्चों के व्यस्त जीवन और बदलती प्राथमिकताओं के कारण वृद्ध जन अकेलेपन का अनुभव करते हैं।

(2) आर्थिक असुरक्षा

कई वृद्ध जन आर्थिक रूप से अपने बच्चों पर निर्भर होते हैं। यदि परिवार उनका सहयोग नहीं करता तो उनकी स्थिति और भी कठिन हो जाती है।

समकालीन उपन्यासों में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जहाँ वृद्ध पात्र आर्थिक अभाव और असुरक्षा से जूझते हुए दिखाई देते हैं।

(3) मानसिक और भावनात्मक पीड़ा

वृद्धावस्था में व्यक्ति को भावनात्मक सहारे की आवश्यकता होती है। जब परिवार और समाज से यह सहारा नहीं मिलता तो वह मानसिक रूप से टूटने लगता है।

उपन्यासों में कई वृद्ध पात्र अपने अतीत की स्मृतियों में जीते हुए दिखाई देते हैं। वे अपने जीवन के अनुभवों को साझा करना चाहते हैं, लेकिन उन्हें सुनने वाला कोई नहीं होता।

बदलती पारिवारिक संरचना और वृद्ध जन

भारतीय समाज में संयुक्त परिवार की परंपरा लंबे समय तक सामाजिक व्यवस्था का आधार रही है। इस व्यवस्था में परिवार के कई पीढ़ियाँ एक साथ रहती थीं और परिवार का संचालन सामूहिक सहयोग, पारस्परिक समझ और भावनात्मक जुड़ाव के आधार पर होता था। संयुक्त परिवार में वृद्ध जनों को विशेष सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त होती थी। वे परिवार के सबसे अनुभवी और मार्गदर्शक सदस्य माने जाते थे। परिवार के महत्वपूर्ण निर्णयों में उनकी सलाह को अत्यंत महत्व दिया जाता था। उनके अनुभव, जीवन–दृष्टि और संस्कारों के कारण वे परिवार की एकता और स्थिरता के केंद्र बने रहते थे।

किन्तु आधुनिक समय में सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण इस पारंपरिक व्यवस्था में धीरे–धीरे परिवर्तन आने लगा है। औद्योगीकरण, शहरीकरण, शिक्षा के प्रसार, रोजगार के नए अवसरों और आधुनिक जीवन–शैली के प्रभाव से संयुक्त परिवारों का स्वरूप कमजोर होता जा रहा है। आज के समय में लोग बेहतर रोजगार और सुविधाओं की तलाश में गाँवों और छोटे शहरों से महानगरों की ओर पलायन कर रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप परिवार छोटे–छोटे एकल परिवारों में विभाजित हो रहे हैं। एकल परिवार की इस बढ़ती प्रवृत्ति ने पारिवारिक संबंधों की संरचना और स्वरूप को काफी हद तक बदल दिया है। इस परिवर्तन का सबसे अधिक प्रभाव वृद्ध जनों के जीवन पर पड़ा है। पहले जहाँ वे परिवार के केंद्र में होते थे, वहीं अब कई बार वे परिवार के हाशिए पर पहुँच जाते हैं। संयुक्त परिवार में जहाँ उनके अनुभवों और विचारों का सम्मान किया जाता था, वहीं एकल परिवारों में उनकी भूमिका सीमित हो जाती है। आधुनिक जीवन की व्यस्तता, प्रतिस्पर्धा और भौतिकवादी सोच के कारण युवा पीढ़ी के पास वृद्ध जनों के लिए पर्याप्त समय और संवेदनशीलता नहीं रह जाती। परिणामस्वरूप कई बार वृद्ध जन उपेक्षा, अकेलेपन और भावनात्मक असुरक्षा का अनुभव करते हैं। समकालीन हिंदी उपन्यासों में इस सामाजिक परिवर्तन और उसके प्रभावों का अत्यंत संवेदनशील और यथार्थपरक चित्रण देखने को मिलता है। कई उपन्यासकारों ने अपने पात्रों के माध्यम से यह दिखाने का प्रयास किया है कि बदलती पारिवारिक संरचना ने वृद्ध जनों के जीवन को किस प्रकार प्रभावित किया है। इन उपन्यासों में वृद्ध पात्रों की पीड़ा, उनके

अकेलेपन की भावना, तथा परिवार से मिलने वाली उपेक्षा को गहराई से प्रस्तुत किया गया है। लेखक यह भी दर्शाते हैं कि आधुनिक जीवन–शैली, भौतिकवादी दृष्टिकोण और व्यक्तिगत स्वार्थ की प्रवृत्ति ने पारिवारिक संबंधों की आत्मीयता और संवेदनशीलता को कम कर दिया है।

अकेलापन और सामाजिक अलगाव

वृद्धावस्था में अकेलापन और सामाजिक अलगाव एक गंभीर और संवेदनशील समस्या के रूप में उभरकर सामने आता है। जीवन के इस चरण में व्यक्ति को सबसे अधिक भावनात्मक सहारे, स्नेह और संवाद की आवश्यकता होती है। किन्तु बदलती सामाजिक परिस्थितियों, व्यस्त जीवन–शैली और पारिवारिक संरचना में आए परिवर्तन के कारण वृद्ध जन अक्सर स्वयं को अकेला और उपेक्षित महसूस करने लगते हैं। आधुनिक जीवन की भागदौड़ में परिवार के सदस्य अपने कार्य, व्यवसाय और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं में इतने व्यस्त हो जाते हैं कि उनके पास वृद्ध जनों के साथ समय बिताने का अवसर बहुत कम रह जाता है। परिणामस्वरूप वृद्ध व्यक्ति धीरे–धीरे परिवार और समाज से अलग–थलग पड़ने लगते हैं। समकालीन हिंदी उपन्यासों में इस स्थिति का अत्यंत मार्मिक और यथार्थपरक चित्रण मिलता है। अनेक उपन्यासों में वृद्ध पात्र अपने ही घर में रहते हुए भी मानसिक रूप से अकेले दिखाई देते हैं। वे परिवार के बीच होते हुए भी स्वयं को उपेक्षित और अनदेखा महसूस करते हैं। उनकी भावनाओं, अनुभवों और विचारों को सुनने वाला कोई नहीं होता। ऐसे में वे अक्सर अपने अतीत की स्मृतियों में खोए रहते हैं और अपने बीते हुए समय को याद करके मानसिक संतोष प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। अतीत की यादें उनके लिए एक प्रकार का सहारा बन जाती हैं, क्योंकि वर्तमान जीवन में उन्हें वह आत्मीयता और अपनापन नहीं मिल पाता जिसकी उन्हें अपेक्षा होती है।

इसके साथ ही सामाजिक स्तर पर भी वृद्ध जनों का दायरा सीमित होता चला जाता है। पहले जहाँ वे पड़ोस, मित्रों और सामाजिक गतिविधियों से जुड़े रहते थे, वहीं उम्र बढ़ने के साथ–साथ उनका सामाजिक संपर्क कम होने लगता है। शारीरिक कमजोरी, स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ और परिवार के सदस्यों की व्यस्तता के कारण वे सामाजिक गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग नहीं ले पाते। इससे उनके जीवन में अलगाव की भावना और अधिक गहरी हो जाती है। समकालीन हिंदी उपन्यासकारों ने इस समस्या को केवल व्यक्तिगत पीड़ा के रूप में नहीं, बल्कि एक व्यापक सामाजिक समस्या के रूप में प्रस्तुत किया है। वे यह दिखाने का प्रयास करते हैं कि अकेलापन केवल वृद्ध व्यक्ति की मानसिक स्थिति नहीं है, बल्कि यह समाज की बदलती संवेदनशीलता और पारिवारिक मूल्यों में आई कमी का परिणाम भी है। जब समाज में पारस्परिक संवाद, आत्मीयता और सहानुभूति का अभाव हो जाता है, तब वृद्ध जनों का अकेलापन और अधिक बढ़ जाता है। इस प्रकार समकालीन हिंदी उपन्यासों में वृद्ध जनों के अकेलेपन और सामाजिक अलगाव का चित्रण समाज के सामने एक महत्वपूर्ण प्रश्न खड़ा करता है। यह हमें यह सोचने के लिए प्रेरित करता है कि आधुनिक जीवन की व्यस्तता और भौतिकता के बीच कहीं हम अपने बुजुर्गों की भावनात्मक आवश्यकताओं को तो नहीं भूलते जा रहे हैं। इसलिए आवश्यक है कि परिवार और समाज दोनों ही स्तरों पर वृद्ध जनों के साथ संवाद, सम्मान और आत्मीयता को बनाए रखा जाए, ताकि उनका जीवन अकेलेपन और अलगाव से मुक्त होकर गरिमा और संतोष के साथ व्यतीत हो सके।

वृद्ध जनों के प्रति संवेदनशीलता की आवश्यकता

वर्तमान समय में समाज तेजी से बदल रहा है और जीवन की गति पहले की तुलना में अधिक व्यस्त और प्रतिस्पर्धात्मक हो गई है। ऐसे परिवर्तित सामाजिक परिवेश में कई बार मानवीय संबंधों की संवेदनशीलता कमजोर पड़ती हुई दिखाई देती है, जिसका सबसे अधिक प्रभाव समाज के कमजोर और निर्भर वर्गों पर पड़ता है, विशेष रूप से वृद्ध जनों पर। जीवन के इस अंतिम चरण में व्यक्ति को केवल आर्थिक सहारे की ही नहीं, बल्कि भावनात्मक सहयोग, सम्मान और आत्मीयता की भी आवश्यकता होती है। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि परिवार और समाज वृद्ध जनों के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाएँ और उनके जीवन को गरिमापूर्ण बनाने के लिए सकारात्मक प्रयास करें। समकालीन हिंदी उपन्यासों में वृद्ध जनों से जुड़ी समस्याओं का चित्रण केवल सहानुभूति उत्पन्न करने के उद्देश्य से नहीं किया गया है, बल्कि इसके माध्यम से समाज को जागरूक करने का प्रयास भी किया गया है। उपन्यासकार अपने पात्रों और कथानकों के माध्यम से यह दिखाते हैं कि वृद्ध जनों की उपेक्षा केवल व्यक्तिगत स्तर की समस्या नहीं है, बल्कि यह सामाजिक मूल्यों के ह्रास का संकेत भी है। जब परिवार और समाज अपने बुजुर्गों के अनुभवों और जीवन–संघर्षों को महत्व देना बंद कर देते हैं, तब सामाजिक संतुलन और नैतिक मूल्यों पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। लेखक अपने साहित्य के माध्यम से यह संदेश देने का प्रयास करते हैं कि वृद्ध जन समाज की अमूल्य धरोहर हैं। उन्होंने अपने जीवन के लंबे अनुभवों, संघर्षों और त्याग के माध्यम से परिवार और समाज को एक मजबूत आधार प्रदान किया है। उनके पास जीवन से जुड़ा वह अनुभव और ज्ञान

होता है, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए मार्गदर्शन का कार्य कर सकता है। इसलिए यह आवश्यक है कि समाज उनके अनुभवों का सम्मान करे और उन्हें परिवार तथा सामाजिक जीवन में सक्रिय रूप से शामिल रखे।

निष्कर्ष

समकालीन हिंदी उपन्यासों में वृद्ध जनों का चित्रण समाज के बदलते यथार्थ को अत्यंत स्पष्ट और संवेदनशील रूप में सामने लाता है। इन उपन्यासों में यह दिखाया गया है कि आधुनिक जीवन की तेज़ गति, बदलती पारिवारिक संरचना और भौतिकवादी सोच ने पारंपरिक सामाजिक मूल्यों को किस प्रकार प्रभावित किया है। जहाँ पहले भारतीय समाज में वृद्ध जनों को सम्मान, प्रतिष्ठा और निर्णय लेने का अधिकार प्राप्त था, वहीं आज कई परिस्थितियों में उन्हें उपेक्षा, अकेलेपन और असुरक्षा का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार समकालीन उपन्यासकारों ने अपने साहित्य के माध्यम से वृद्धावस्था से जुड़ी वास्तविक समस्याओं और चुनौतियों को गहराई से उजागर किया है। इन उपन्यासों में वृद्ध जनों के जीवन से जुड़ी अनेक समस्याओं जैसे पारिवारिक उपेक्षा, आर्थिक असुरक्षा, अकेलापन, सामाजिक अलगाव और मानसिक पीड़ाकृका यथार्थपरक और मार्मिक चित्रण मिलता है। लेखक अपने पात्रों के माध्यम से यह दिखाते हैं कि बदलती सामाजिक परिस्थितियों में वृद्ध जनों की स्थिति किस प्रकार प्रभावित हुई है। उनके जीवन में उत्पन्न होने वाली कठिनाइयाँ केवल व्यक्तिगत नहीं हैं, बल्कि वे समाज की बदलती मानसिकता और मूल्यों के संकट को भी दर्शाती हैं। इस प्रकार समकालीन हिंदी उपन्यास समाज के सामने एक महत्वपूर्ण प्रश्न प्रस्तुत करते हैं कि आधुनिकता और विकास की दौड़ में कहीं हम अपने पारिवारिक और मानवीय मूल्यों को तो नहीं खोते जा रहे हैं। साथ ही यह साहित्य हमें यह भी सिखाता है कि किसी भी समाज की वास्तविक प्रगति केवल आर्थिक या भौतिक विकास से नहीं मापी जा सकती, बल्कि यह इस बात पर भी निर्भर करती है कि वह अपने कमजोर और वरिष्ठ वर्गों के प्रति कितना संवेदनशील है। वृद्ध जन केवल परिवार के सदस्य ही नहीं, बल्कि अनुभव, ज्ञान और सांस्कृतिक परंपराओं के महत्वपूर्ण वाहक भी होते हैं। इसलिए उनका सम्मान और संरक्षण समाज की नैतिक जिम्मेदारी है। अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि परिवार और समाज दोनों ही स्तरों पर वृद्ध जनों के प्रति सम्मान, संवेदना और सहयोग की भावना को पुनः स्थापित किया जाए। यदि समाज अपने बुजुर्गों को प्रेम, सुरक्षा और आत्मीयता प्रदान करेगा, तो उनका जीवन अधिक गरिमामय, संतोषपूर्ण और सुखद बन सकेगा। इसके साथ ही समाज में मानवीयता, पारिवारिक एकता और सांस्कृतिक मूल्यों की भी रक्षा संभव हो सकेगी।

संदर्भ

- शुक्ल, रामचंद्र. (2017). हिंदी साहित्य का इतिहास. नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन।
- सिंह, नामवर. (2012). कहानी नई कहानी. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- शर्मा, रामविलास. (2015). हिंदी साहित्य और समाज. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- द्विवेदी, हजारी प्रसाद. (2010). साहित्य का मर्म. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- भंडारी, मन्नू. (2014). आपका बंटी. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।
- सोबती, कृष्णा. (2000). मित्रो मरजानी. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- राय, अमृतलाल नागर. (2005). नाच्यो बहुत गोपाल. नई दिल्ली: राजपाल एंड संस।
- वर्मा, भगवतीचरण. (2011). चित्रलेखा. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- जोशी, मनोहर श्याम. (2006). कुरु कुरु स्वाहा. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- सहगल, भीष्म. (2013). तमस. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- रेणु, फणीश्वरनाथ. (2009). मैला आँचल. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- नागर, अमृतलाल. (2011). बूंद और समुद्र. नई दिल्ली: राजपाल एंड संस।
- प्रेमचंद, मुंशी. (2015). निर्मला. नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन।
- सिंह, नामवर. (2011). इतिहास और आलोचना. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- मिश्रा, विद्यानिवास. (2008). भारतीय संस्कृति और साहित्य. नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।
- अग्रवाल, वासुदेव. (2004). भारतीय समाज और संस्कृति. नई दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास।
- पांडेय, मैनेजर. (2010). साहित्य और समाज. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- तिवारी, रामचंद्र. (2012). हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद. वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन।
- गुप्ता, गणेशदत्त. (2014). समकालीन हिंदी उपन्यास. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- श्रीवास्तव, पुरुषोत्तम अग्रवाल. (2013). साहित्य और संस्कृति. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- चतुर्वेदी, रामस्वरूप. (2009). हिंदी साहित्य और आलोचना. नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन।
- मिश्रा, शिवकुमार. (2011). समकालीन हिंदी कथा साहित्य का अध्ययन. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।